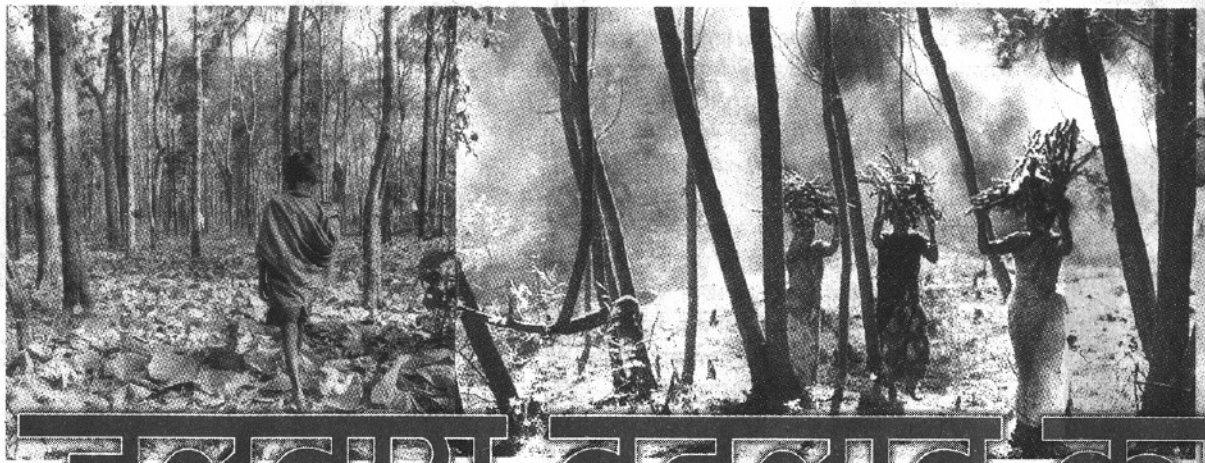

प्रभाव

- -वनोपज में गिरावट
- -चारे का संकट
- -पशुधन में ह्रास और दूध कम
- -माताओं के दूध में कमी
- -अनाज गर्मी के कारण समय पूर्व परिपक्व
- -खरपतवार की वृद्धि
- -शहद में कमी
- -पलास में फूल नहीं
- -ग्रामीणों और आदिवासियों में निराशा

जलवायु बदलाव का संकट गाँवों और वनों पर

लोकमत समाचार 15-03-09

दूर-दूर के गाँवों में लोग यह देख तो रहे हैं कि मौसम के मिजाज बदले-बदले से हैं. यदि अधिक स्थाई बदलाव आ रहे हैं, तो समय रहते सरकार को इसके लिए जरूरी नीतियाँ और कार्यक्रम अपनाने पड़ेंगे अन्यथा गाँववासियों विशेषकर किसानों, पशुपालकों, वनों की आजीविका से जुड़े आदिवासी समुदायों आदि का रोजी-रोटी का संकट बहुत गंभीर हो जाएगा.

-भारत डोगरा

पिछले कुछ वर्षों से विश्व स्तर पर पर्यावरण का जो संकट सबसे अधिक चर्चित रहा, वह है जलवायु बदलाव का संकट. इसे भविष्य का सबसे गंभीर पर्यावरणीय संकट माना जा रहा है. इसके बारे में बार-बार चेतावनी हो रही है कि इसके कितने व्यापक और गंभीर दुष्परिणाम हो सकते हैं और कुछ हद तक यह दुष्परिणाम सामने आने भी लगे हैं. इसके बावजूद अभी हमारे देश में गंभीर समस्याओं की सही समझ में जलवायु बदलाव संबंधी सोच का समावेश नहीं हुआ है. दूर-दूर के गाँवों में लोग यह देख तो रहे हैं कि मौसम के मिजाज बदले-बदले से हैं, पर बदलती स्थिति की निश्चित पहचान कठिन हो रही है, क्योंकि मौसम में उतार-चढ़ाव पहले भी आते रहे हैं. क्या यह पहले जैसी ही स्थिति है, जो कुछ समय के लिए बिगड़ गई है और फिर सामान्य हालत में लौट जाएगी. या यह बदलाव अधिक स्थाई होगा? इस तरह के सवालों का जवाब जानना जरूरी है. क्योंकि, यदि अधिक स्थाई बदलाव आ रहे हैं, तो समय रहते सरकार को इसके लिए जरूरी नीतियाँ और कार्यक्रम अपनाने पड़ेंगे अन्यथा गाँववासियों विशेषकर किसानों, पशुपालकों, वनों की आजीविका से जुड़े आदिवासी समुदायों आदि का रोजी-रोटी का संकट बहुत गंभीर हो जाएगा.

गाँवों में असर

हाल ही में उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश के अनेक गाँवों का दौरा कर किसानों, आदिवासियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि से यह जानने का मैंने प्रयास किया कि वे मौसम के बदलते मिजाज को हकीकत मानते हैं या नहीं? यदि मौसम में वास्तव में महत्वपूर्ण बदलाव आ रहे हैं, तो इसका उन पर क्या प्रतिकूल असर पड़ रहा है और इन दुष्परिणामों को रोकने के लिए क्या किया जा सकता है. मदुलिहाई गाँव (जिला सतना, मध्यप्रदेश) की कोल आदिवासी महिला प्रेमिया बाई ने बताया कि यदि वे पिछले वर्ष की तुलना दस साल पहले से करें, तो वर्ष २००८ में लगभग एक दशक पहले की अपेक्षा मात्र दस प्रतिशत महुआ और पाँच प्रतिशत आंवला प्राप्त हुआ. इसके अतिरिक्त अनेक पौष्टिक कंदमूल अब मिल ही नहीं रहे हैं. इन आदिवासियों के भोजन में महुआ और आंवला जैसे पौष्टिक खाद्यों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है. साथ ही लघुवनोपज बेचने में कुछ नकद आय भी हो जाती थी. इस तरह इन लोगों के पोषण और रोजी-रोटी पर बहुत प्रतिकूल असर पड़ा है. इसी गाँव के दाकू लाल ने बताया कि हाल के चार-पाँच वर्षों में अधिकांश समय सूखे का प्रकोप रहा और वर्षा हुई भी तो उचित समय पर नहीं हुई. इस कारण जो थोड़ी बहुत खेतीबाड़ी इन आदिवासियों की है, वह बुरी तरह तहस-नहस हो गई है.

मनगवां और टिकरिया

मनगवां (जिला चित्रकूट, उत्तर प्रदेश) की आदिवासी महिला फुलमतिया ने कहा कि उनके यहाँ भी महुआ, आंवले और कंदमूल में बेहद कमी आई है. साथ ही बीड़ी लपेटने के लिए उपयोग होने वाला तेंदुपत्ता अब कम मिलता है. कई बार इतना छोटा मिलता है कि उसमें बीड़ी न लपेटी जा सके. इस कारण तेंदुपत्ते एकत्र करने में होने वाली आय कम हुई है. इसी गाँव के कोदन कोल ने बताया कि पलाश के पेड़ पर अब फूल नजर नहीं आ रहे हैं और परोड़ा जैसी पौष्टिक सब्जी अब जंगल में आसानी से नहीं मिलती है. इसकी उपलब्धि अब मात्र १० प्रतिशत है. यहाँ के लोगों ने पशुपालन के बारे में पूछने पर कहा कि चारे का संकट है और पशुओं की संख्या कम हो रही है.पशु पहले से कम समय तक दूध देते हैं और दूध की मात्रा भी काफी कम हो गई है. इस बारे में आदिवासी समूह में बात चल ही रही थी कि एक महिला ने कहा, 'तुम गायों की ही बात कर रहे हो, पर महिलाओं में भी तो दूध की कमी आई है.' इस पर पहले तो सब लोग हंसने लगे, पर फिर हमने समझा कि बाल कुपोषण की दृष्टि से यह बहुत गंभीर मुद्दा है. महिलाओं ने बताया कि पहले वे दो वर्ष तक के शिशु को आराम से दूध पिलाती थीं, जबकि अब मात्र केवल एक वर्ष तक पिला पाती हैं.

इसी जिले के टिकरिया गाँव की कुसुमा कोल ने बताया कि बच्चों को दूध पिलाने की अवधि में निश्चय ही कमी आई है और महिलाओं के पोषण में भी. पिछले दो वर्षों में उनकी फसल की ऐसी तबाही हुई कि उन्होंने उसकी कटाई तक नहीं की. क्षेत्र के वरिष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता राजा बुका ने बताया कि गेहूँ और कुछ हद तक अन्य अनाजों में अधिक गर्मी के कारण परिपक्वता जल्दी

आ जाती है, जिससे मुख्य तना तेजी में बढ़ जाता है, पर टिलर पहले जितने नहीं निकल पाते हैं .अनाज का उत्पादन कम होता है. उन्होंने बताया कि लैंटाना और गाजर घास के अतिरिक्त स्थानीय गंधेला खरपतवार तेजी से फैल रही है और कृषि उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है.

अनाज और शहद कम

अमचूर नेरूवा गाँव (जिला चित्रकूट) के रामदुख कोल ने बताया कि अपनी तेरह बीघा जमीन से वह पंद्रह बोरी धान प्राप्त करता था, पर पिछले दो वर्ष मौसम इतना प्रतिकूल था कि जमीन खाली पड़ी रही. उसने बुवाई ही नहीं की. रामदुख ने कहा कि एक समय उसके गाँव से बीस बोरे महुआ की बिक्री हुई थी, जबकि अब कुछ खाने लायक महुआ कठिनाई से बीन पाते हैं. वन से शहद एकत्र करनेवाले यहाँ के गाँववासी गोकुल ने बताया कि अब छत्ते में बहुत कम शहद प्राप्त होता है. यहाँ के किसान धर्मनारायण द्विवेदी ने बताया कि पहले उनके खेतों में नौ सदस्यों के परिवार के लिए पर्याप्त खाद्य के साथ बिक्री के लिए भी काफी फसल होती थी, जबकि अब परिवार का पेट भी खेत नहीं भर पा रहे हैं. इस क्षेत्र के वरिष्ठ सामाजिक कार्यकर्ता गोपाल भाई ने बताया कि इन प्रतिकूल स्थितियों में सरकार की जिम्मेदारी और भी बढ़ जाती है कि गाँववासियों की रोजी-रोटी की रक्षा के लिए अधिक असरदार नीतियाँ अपनाएं.

उपाय

कुछ लोग यह कह सकते हैं कि इस तरह की प्रतिकूल स्थितियाँ पहले भी उत्पन्न होती रही हैं, पर कुछ गाँवों में विस्तार से बातचीत करने पर यह प्रतीत हुआ कि यह बदलाव पहले से कहीं अधिक व्यापक और स्थाई किस्म के है. यही लगता है कि जलवायु बदलाव का संकट अब कई तरह के कष्टदायक रूप में हमारे किसानों, पशुपालकों और वनोपज एकत्र करने वालों तक पहुँच रहा है. उनकी खेती और अन्य तरह की आजीविका के लिए पहले की अपेक्षा कहीं अधिक कठिन स्थितियाँ उपस्थित हो रही हैं. हमें समय रहते इस संकट को ठीक से समझकर नीतियों, कार्यक्रमों और तकनीकों में जरूरी बदलाव लाने चाहिए. जल और नमी संरक्षण पर अब पहले से भी अधिक ध्यान देना और जरूरी हो गया है. इसके साथ ही गाँवों में और गाँवों के आसपास हरियाली बढ़ाना, चारे की उपलब्धि बढ़ाना, आत्मनिर्भर और सस्ती तकनीकों पर जोर देना और महत्वपूर्ण हो गया है. परंपरागत बीजों का संरक्षण करना, परंपरागत ज्ञान से सीखना और बड़े-बुजुर्गों से बातचीत कर उनके खेती किसानी की परंपरागत सिंचाई के ज्ञान को संजोना बहुत जरूरी है. तेजी से बदलती स्थिति में किसानों के लिए खेती की तकनीक, बीज, खाद, फसल की बीमारी और रोगों को रक्षा के बारे में आत्मनिर्भरता बढ़ाना बहुत जरूरी हो गया है. परंपरागत ज्ञान में तरह-तरह के बीजों और फसलों की किस्मों की जानकारी, अलग-अलग मौसम के लिए अनुकूल विविध किस्मों की जानकारी बहुत महत्वपूर्ण है. सरकार को छोटे किसानों, कमजोर समुदायों और परंपरागत ज्ञान पर अधिक ध्यान देना चाहिए और प्रतिकूल मौसम का सामना करने की तैयारी को मजबूत करना चाहिए. □